Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

राजस्थान लोक सेवा आयोग (RAS/RTS)

भारतीय राजव्यवस्था

(राजस्थान के विशेष संदर्भ सहित)

भाग-1

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: RJPM03

राजस्थान लोक सेवा आयोग (RAS/RTS)

भारतीय राजव्यवस्था

(राजस्थान के विशेष संदर्भ सहित)

भाग-1

दृष्टि The Vision
641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 87501 87501
टोल फ्री : **1800-121-6260**
Web : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

RAS DLP विषय सूची (Contents)

1. राजव्यवस्था का परिचय	**5–11**
1.1 प्रमुख शासन प्रणालियाँ	5
1.2 लोकतंत्र एवं उसके प्रकार	8
2. संविधान : एक संक्षिप्त परिचय	**12–28**
2.1 संविधान सभा और संविधान निर्माण समिति	12
2.2 संविधान सभा में राजस्थान के प्रतिनिधि	15
2.3 संविधान की प्रमुख विशेषताएँ	15
2.4 संविधान के महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद	19
2.5 संविधान की अनुसूचियाँ	21
2.6 संविधान के विभिन्न भाग तथा विषय	22
2.7 भारतीय संविधान की अन्य देशों के संविधानों से तुलना	23
3. संविधान की प्रस्तावना	**29–33**
3.1 प्रस्तावना की विषयवस्तु	29
3.2 प्रस्तावना की उपयोगिता	29
4. संघ और उसका राज्यक्षेत्र	**34–42**
5. नागरिकता संबंधी उपबंध	**43–50**
6. मूल अधिकार	**51–64**
6.1 पृष्ठभूमि	51
6.2 समता का अधिकार	52
6.3 स्वतंत्रता का अधिकार	54
6.4 शोषण के विरुद्ध अधिकार	56
6.5 धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार	57
6.6 संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार	58
6.7 संवैधानिक उपचारों का अधिकार	58
7. राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत	**65–72**

8. मूल कर्त्तव्य	**73–76**
9. केंद्र (संघ) की कार्यपालिका	**77–102**
9.1 भारत का राष्ट्रपति	77
9.2 भारत का उपराष्ट्रपति	88
9.3 भारत का प्रधानमंत्री	91
9.4 केंद्रीय मंत्रिपरिषद	95
9.5 भारत का महान्यायवादी	98
10. राज्य की कार्यपालिका	**103–126**
10.1 राज्यपाल	103
10.2 मुख्यमंत्री	114
10.3 मंत्रिपरिषद	119
10.4 महाधिवक्ता	122
11. केंद्र (संघ) की विधायिका	**127–154**
11.1 संसद का गठन	127
11.2 संसद में विधि निर्माण प्रक्रिया	136
11.3 बजट संबंधी प्रक्रिया	140
11.4 संसद में कामकाज	144
11.5 लोकसभा व राज्यसभा की तुलना	148
11.6 संसद में राजस्थान	149
12. राज्य विधायिका	**155–169**
12.1 विधानपरिषद	155
12.2 विधानसभा	157
12.3 विधि निर्माण	159
12.4 राजस्थान विधायिका	164
13. न्यायपालिका	**170–208**
13.1 सर्वोच्च न्यायालय	171
13.2 उच्च न्यायालय	183
13.3 राजस्थान उच्च न्यायालय	192
13.4 ज़िला एवं अधीनस्थ न्यायालय	193
13.5 लोक अदालत एवं ग्राम न्यायालय	196
13.6 न्यायिक सक्रियता और जनहित याचिका	200
13.7 न्यायपालिका की अवमानना	203

अध्याय
1

राजव्यवस्था का परिचय (Introduction of Polity)

राज्य राजव्यवस्था से जुड़ी प्राथमिक एवं अमूर्त अवधारणा है। यूँ तो 'राज्य' शब्द का प्रयोग विभिन्न प्रांतों, जैसे– राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तरप्रदेश आदि को सूचित करने के लिये होता है परंतु उसका वास्तविक अर्थ समाज की 'राजनीतिक संरचना' से होता है। उदाहरणार्थ भारत सरकार, राज्य सरकारें, न्यायपालिका, विधायिका, नौकरशाही से जुड़े अधिकारी आदि की समग्र संरचना ही 'राज्य' कहलाता है।

किसी भी 'राज्य' में चार तत्त्व अनिवार्य रूप से विद्यमान होते हैं–**भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता।** इनमें से किसी भी तत्त्व का अभाव होने पर 'राज्य' की अवधारणा निरर्थक हो जाएगी। **सरकार** नामक तत्त्व का जहाँ तक प्रश्न है तो यह राज्य की व्यावहारिक एवं मूर्त अभिव्यक्ति है। **संप्रभुता** राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।

1.1 प्रमुख शासन प्रणालियाँ *(Major Governance Systems)*

सामान्यत: विभिन्न देशों की शासन प्रणालियों में अंतर उनकी सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि के कारण होता है। विश्व की प्रमुख शासन प्रणालियों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधार पर किया जा सकता है–

शासन प्रणालियों के विभिन्न रूप (Different types of governance systems)

- शासक-समूह में शामिल व्यक्तियों की संख्या के आधार पर
  - राजतंत्र तथा तानाशाही (Monarchy and Dictatorship)
  - अल्पतंत्र या गुटतंत्र (Oligarchy)
  - लोकतंत्र (Democracy)
- शासन की वैधता के स्रोत के आधार पर
  - धर्मतंत्र (Theocracy)
  - राजतंत्र (Monarchy)
  - कुलीनतंत्र या अभिजनतंत्र (Aristocracy)
  - लोकतंत्र (Democracy)
- शासन प्रणाली का संविधान सम्मत होने के आधार पर
  - संविधानवाद (Constitutionalism)
  - गैर-संविधानवाद (Non–Constitutionalism)
- शासन प्रणाली के व्यावहारिक मूल्यांकन के आधार पर
  - भीड़तंत्र (Mobocracy)
  - धनतंत्र (Plutocracy)
  - औसततंत्र (Mediocracy)
  - निरंकुशतंत्र (Autocracy)
  - गुणतंत्र/योग्यतातंत्र (Meritocracy)
  - वृद्धतंत्र (Gerontocracy)

यहाँ एक विचारणीय प्रश्न यह है कि भारतीय राज्यव्यवस्था शासन की इन विभिन्न प्रणालियों में से किसके नज़दीक है? इसे निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

- सैद्धांतिक तौर पर भारत में **लोकतंत्र** है, परंतु अधिकांश जनता के अशिक्षित और गरीब होने के कारण सत्ता की प्रतिस्पर्द्धा दो-तीन छोटे-छोटे गुटों के बीच होती है। अत: कुछ लोग इसे **अल्पतंत्र या गुटतंत्र** कहते हैं।
- यदि सरकार की वैधता धार्मिक ग्रंथों पर टिकी होती है तथा चुनाव प्रचार में धार्मिक नेताओं की बड़ी भूमिका होती है तो ऐसी शासन व्यवस्था **धर्मतंत्र** कहलाती है। मोटे तौर पर तिब्बत व वेटिकन सिटी की शासन प्रणालियों को इस वर्ग में रखा जा सकता है।

द्विदलीय लोकतंत्र में दो राजनीतिक दलों की प्रधानता होती है। संविधान के अनुसार यहाँ अन्य राजनीतिक दल भी हो सकते हैं, परंतु व्यवहार में शेष दलों का महत्त्व नहीं के बराबर होता है और प्रभावी तौर पर सत्ता उन दोनों राजनीतिक दलों के पास बनी रहती है, जैसे– **ब्रिटेन की लेबर पार्टी और कंजर्वेटिव पार्टी, अमेरिका का डेमोक्रेटिक दल व रिपब्लिकन दल।**

बहुदलीय लोकतंत्र में दो से अधिक दल बहुमत प्राप्ति के लिये संघर्षरत रहते हैं। ऐसा हो सकता है कि सामान्यत: इस प्रणाली में भी दो या चार दल ज़्यादा प्रभावी हों परंतु शेष दल इतने कमज़ोर नहीं होते कि उन्हें महत्त्वहीन मान लिया जाए, जैसे– भारत, स्वीडन, नॉर्वे, फ्राँस, इटली आदि।

दलीय संख्या के आधार पर भारतीय लोकतंत्र की यात्रा
(Journey of the Indian democracy on the basis of party numbers)

भारत के संविधान निर्माताओं ने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, क्षेत्रीय और भाषायी विविधता को देखते हुए बहुदलीय लोकतंत्र को अपनाया। आज़ादी के बाद 1977 तक केंद्र में कॉन्ग्रेस पार्टी का लगातार प्रभुत्व रहा। यहाँ भारतीय लोकतंत्र व्यवहार में **एक-दल-प्रधान-प्रणाली** का उदाहरण नज़र आता है। 1990 के दशक में स्थिति यह हो गई कि 20 से भी अधिक दलों की गठबंधन सरकार बन रही थी और कुछ दलों की अपरिपक्वता के कारण देश राजनीतिक अस्थिरता के दौर से गुज़रा। इस दौर में कई विद्वानों ने तो बहुदलीय ढाँचे की आलोचना करते हुए द्विदलीय व्यवस्था अपनाने का सुझाव दिया।

परंतु, भारतीय मतदाताओं की परिपक्वता और नई राजनीतिक संस्कृति के कारण धीरे-धीरे दो गठबंधन-संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA–United Progressive Alliance) और राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA–National Democratic Alliance) अस्तित्व में आए और अन्य अधिकांश दल अपनी-अपनी सुविधानुसार इनसे जुड़ते चले गए। इस प्रकार भारतीय व्यवस्था द्विगठबंधनीय व्यवस्था (Two coalitions system) हो गई।

वर्तमान समय में यूँ तो केंद्र में BJP को स्पष्ट बहुमत है परंतु NDA के सभी घटक दल आपस में जुड़े हुए हैं और केंद्र व राज्यों में शासन और निर्वाचन प्रणाली में मिलकर भाग ले रहे हैं। इस नए राजनीतिक ढाँचे का लाभ यह है कि इसमें द्विदलीय प्रणाली वाली स्थिरता भी विद्यमान है और देश के भाषायी, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक वैविध्य को अभिव्यक्त करने वाली बहुदलीय प्रणाली के लाभ भी इसमें शामिल हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारतीय लोकतंत्र द्विदलीय प्रणाली पर तो नहीं, किंतु **द्वि-गठबंधनीय व्यवस्था** पर अवश्य चल रहा है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- राज्यव्यवस्था से जुड़ी प्राथमिक एवं अमूर्त अवधारणा 'राज्य' का संबंध किसी समाज की राजनीतिक संरचना से है।
- भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता राज्य के चार अनिवार्य तत्त्व हैं।
- सरकार 'राज्य' की मूर्त एवं व्यावहारिक अभिव्यक्ति है।
- संप्रभुता राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।
- राष्ट्र विरोधी ताकतों से निपटने, आंतरिक सुरक्षा की चुनौतियों से निपटने, समाज के वंचित वर्ग को मुख्यधारा से जोड़ने, विभिन्न हित समूहों के मध्य आपसी सामंजस्य स्थापित करने आदि के कारण भारत को राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता है।
- भारतीय शासन प्रणाली सामान्यत: संघात्मक है, जो संकट के समय एकात्मक रूप धारण कर लेती है।
- भारत ने संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया है, जिसमें राज्याध्यक्ष 'राष्ट्रपति' ब्रिटेन के सम्राट की तरह नाममात्र का प्रधान है।
- निजीकरण और उदारीकरण की नीतियाँ भारतीय लोकतंत्र को समाजवादी लोकतंत्र के मुकाबले उदारवादी लोकतंत्र के ज़्यादा नज़दीक बनाती है।
- क्षेत्रीय, भाषायी, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि विविधताओं को देखते हुए भारतीय संविधान निर्माताओं ने बहुदलीय प्रणाली को अपनाया।

- भारतीय बहुदलीय प्रणाली वर्तमान समय में 'द्वि-गठबंधनात्मक व्यवस्था' की ओर बढ़ रही है, न कि 'द्विदलीय व्यवस्था' की ओर।
- स्विट्ज़रलैंड की राजनीतिक प्रणाली में पहल (Initiative) जनमत संग्रह या परिपृच्छा (Referendum) की विशेषता प्रत्यक्ष लोकतंत्र के तत्त्व हैं।
- परिसंघात्मक प्रणाली को 'अविनाशी राज्यों का विनाशी संगठन' कहा जाता है।
- संघात्मक व्यवस्था को 'अविनाशी राज्यों का अविनाशी संगठन' कहा जाता है।
- एकात्मक व्यवस्था को 'विनाशी राज्यों का अविनाशी संगठन' कहा जाता है।
- अध्यक्षीय या शासन की राष्ट्रपति प्रणाली में स्थायित्व, त्वरित निर्णय की क्षमता, विशेषज्ञों की भूमिका जैसे गुण होते हैं।
- संसदीय या प्रधानमंत्रीय प्रणाली में उत्तरदायित्व का निर्धारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है, क्योंकि सरकार को संसद में अपने कार्यों का औचित्य बताना पड़ता है और सदस्यों के प्रश्नों के उत्तर देने पड़ते हैं।
- **तिब्बत और वेटिकन सिटी** की शासन प्रणालियों को **धर्मतंत्र** के वर्ग में रखा जा सकता है।
- संविधानवादी शासन को 'विधि का शासन' कहा जाता है।
- विधायिका में से कार्यपालिका नियुक्त होने के कारण संसदीय प्रणाली में शक्तियों का पृथक्करण एवं नियंत्रण और संतुलन उतना सुदृढ़ नहीं होता, जितना कि अध्यक्षीय प्रणाली में।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिये-
   (i) सरकार राज्य की व्यावहारिक अभिव्यक्ति है।
   (ii) राज्य से अभिप्राय किसी समाज की राजनीतिक संरचना से है।
   (iii) राज्य एक मूर्त धारणा है।
   उपरोक्त कथनों में से कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (1) (i) और (ii) (2) (ii) और (iii)
   (3) (i) और (iii) (4) (i), (ii) और (iii)
2. कौन-सी व्यवस्था 'अविनाशी राज्यों का अविनाशी संगठन' कही जाती है?
   (1) परिसंघात्मक व्यवस्था (2) एकात्मक व्यवस्था
   (3) संघात्मक व्यवस्था (4) इनमें से कोई नहीं
3. 'अविनाशी राज्यों का विनाशी संगठन' कही जाने वाली व्यवस्था है-
   (1) परिसंघात्मक व्यवस्था
   (2) संघात्मक व्यवस्था
   (3) एकात्मक व्यवस्था
   (4) इनमें से कोई नहीं
4. वह राजनीतिक प्रणाली, जिसमें प्रांतों या कार्यकारी इकाइयों का निर्माण संघ की इच्छा पर निर्भर है-
   (1) संघात्मक व्यवस्था (2) परिसंघात्मक व्यवस्था
   (3) एकात्मक व्यवस्था (4) उपरोक्त सभी
5. निम्नलिखित में से कौन-सा अध्यक्षीय प्रणाली का गुण नहीं है?
   (1) विशेषज्ञों की भूमिका
   (2) शक्ति पृथक्करण तथा नियंत्रण व संतुलन का प्रभावी ढंग से पाया जाना
   (3) त्वरित निर्णय की क्षमता
   (4) दैनिक उत्तरदायित्व
6. निम्नलिखित में से कौन-सा संसदीय प्रणाली का गुण नहीं है?
   (1) कार्यपालिका का निर्माण विधायिका में से होता है।
   (2) कार्यकाल की निश्चितता नहीं है अर्थात् स्थायित्व नहीं होता।
   (3) शक्तियों का सुस्पष्ट पृथक्करण नहीं होता।
   (4) राष्ट्रपति वास्तविक राज्याध्यक्ष होता है।
7. राज्य के लिये अनिवार्य तत्त्व हैं-
   (i) जनसंख्या (ii) सरकार
   (iii) संप्रभुता (iv) भू-भाग
   कूट:
   (1) (i), (ii) और (iii)
   (2) (ii), (iii) और (iv)
   (3) (i), (ii) और (iv)
   (4) (i), (ii), (iii) और (iv)

8. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिये–
   (i) अध्यक्षीय प्रणाली में त्वरित निर्णय की क्षमता होती है।
   (ii) मंत्रिपरिषद् में विशेषज्ञों की भूमिका से प्रशासन में कुशलता आती है।

   उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (1) केवल (i)
   (2) केवल (ii)
   (3) (i) और (ii)
   (4) न तो (i) और न ही (ii)
9. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिये–
   (i) संप्रभुता राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।
   (ii) संप्रभुता राज्य की वह सार्वभौम शक्ति है, जिससे वह किसी भी बाह्य अथवा आंतरिक निर्णयों को लेने के लिये स्वतंत्र है।

   उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (1) केवल (i)
   (2) केवल (ii)
   (3) (i) और (ii) दोनों
   (4) न तो (i) और न ही (ii)
10. धर्म तंत्र का उदाहरण है/हैं–
   (1) तिब्बत
   (2) वेटिकन सिटी
   (3) (1) और (2) दोनों
   (4) न तो (1) और न ही (2)

उत्तरमाला

1. (1) 2. (3) 3. (1) 4. (3) 5. (4) 6. (4) 7. (4) 8. (3) 9. (3) 10. (3)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 15–20 शब्दों में दीजिये)

1. राज्य क्या है?
2. राज्य के आवश्यक तत्त्व कौन-कौन से हैं?
3. एकदलीय लोकतंत्र को परिभाषित करें।
4. संघात्मक प्रणाली की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?
5. एकात्मक प्रणाली को परिभाषित कीजिये।

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 50–50 शब्दों में दीजिये)

1. क्या शनैः-शनैः भारत द्विदलीय प्रणाली की ओर बढ़ रहा है?
2. शासन की संसदीय प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करें।
3. शासन की अध्यक्षीय प्रणाली की समस्याओं को उल्लेखित कीजिये।
4. एकदलीय लोकतंत्र एवं बहुदलीय लोकतंत्र के मध्य अंतर कीजिये।
5. द्वि-गठबंधनीय व्यवस्था से आप क्या समझते हैं? इसे स्पष्ट कीजिये।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100 या 200 शब्दों में दीजिये)

1. वर्तमान में भारतीय बहुदलीय प्रणाली 'द्वि-गठबंधनात्मक व्यवस्था' की ओर बढ़ रही है, न कि द्विदलीय व्यवस्था की ओर, इस कथन को स्पष्ट कीजिये।
2. संसदीय और अध्यक्षीय शासन प्रणाली में कौन बेहतरीन है? अपने उत्तर के पक्ष में प्रमाण दें।
3. लोकतंत्र से आप क्या समझते हैं? जनता और शासन संपर्क के आधार पर लोकतंत्र के प्रकारों की विवेचना करें।
4. 'भारतीय शासन प्रणाली संघात्मक है या एकात्मक', समीक्षा कीजिये।
5. भारतीय संविधान निर्माताओं ने शासन की बहुदलीय प्रणाली को अपनाया, इसके पीछे के कारण को स्पष्ट करें।

अध्याय
2

संविधान : एक संक्षिप्त परिचय (Constitution : A Brief Introduction)

संविधान नियमों-उपनियमों का एक ऐसा लिखित दस्तावेज़ होता है, जिसके अनुसार सरकार का संचालन किया जाता है। यह देश की राजनीतिक व्यवस्था का बुनियादी ढाँचा निर्धारित करता है। संविधान राज्य की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की स्थापना, उनकी शक्तियों एवं दायित्वों का सीमांकन तथा जनता और राज्य के मध्य संबंधों को विनियमित करता है।

प्रत्येक संविधान उस देश के आदर्शों, उद्‌देश्यों व मूल्यों का दर्पण होता है। संवैधानिक विधि देश की सर्वोच्च विधि होती है तथा सभी अन्य विधियाँ इसी पर आधारित होती हैं। भारतीय संविधान एक जड़ दस्तावेज़ नहीं है, बल्कि यह परिवर्तनशील है, जिसमें ज़रूरत पड़ने पर संशोधन भी किया जा सकता है, जिससे इसकी प्रासंगिकता बनी रहती है।

2.1 संविधान सभा और संविधान निर्माण समिति *(Constituent Assembly and Constitution Making Committee)*

कैबिनेट मिशन *(Cabinet mission)*

ब्रिटेन में 1945 में हुए आम चुनाव में उदारवादी दृष्टिकोण वाली **लेबर पार्टी** के **सर क्लीमेंट एटली** प्रधानमंत्री बने। शांतिपूर्ण तरीके से भारत में सत्ता हस्तांतरण तथा संवैधानिक मामलों के समाधान हेतु मार्च 1946 में एक तीन सदस्यीय मिशन भारत भेजा गया, जिसमें **सर स्टैफर्ड क्रिप्स, लॉर्ड पैथिक लॉरेंस और ए.वी. अलेक्जेंडर सदस्य** थे। इसे कैबिनेट मिशन कहा गया। मिशन ने भारत में तत्काल एक अंतरिम सरकार की स्थापना एवं संविधान निर्माण के लिये एक योजना प्रस्तुत की।

अंतरिम सरकार का गठन *(Formation of interim government)*

कैबिनेट मिशन द्वारा प्रस्तुत योजना के तहत 24 अगस्त, 1946 को अंतरिम सरकार की घोषणा की गई और 2 सितंबर, 1946 को पं. नेहरू के नेतृत्व में अंतरिम सरकार गठित हुई, जिसमें मुस्लिम लीग की भागीदारी नहीं थी परंतु 26 अक्टूबर, 1946 को मुस्लिम लीग सरकार में शामिल हो गई। परिषद में शामिल तीन सदस्यों सैयद अली ज़हीर, शरतचंद्र बोस, सर शाफत अहमद खाँ को हटाकर लीग के पाँच प्रतिनिधियों को इसमें शामिल किया गया। **यहाँ मुस्लिम लीग के प्रवेश का उद्‌देश्य परिषद के भीतर रहकर पाकिस्तान के लिये लड़ना था।**

अंतरिम मंत्रिमंडल	
• **लॉर्ड माउंटबेटन- अध्यक्ष**	• सी.एच. भाभा- कार्य, खान तथा बंदरगाह
• जवाहरलाल नेहरू- **उपाध्यक्ष,** विदेशी मामले तथा राष्ट्रमंडल	• आसफ अली- रेलवे विभाग व परिवहन
• वल्लभभाई पटेल- गृह, सूचना और प्रसारण	• जगजीवन राम- श्रम विभाग
• जॉन मथाई- उद्योग तथा आपूर्ति विभाग	• लियाकत अली खाँ- वित्त विभाग
• बलदेव सिंह- रक्षा विभाग	• अब्दुल रब निश्तार- संचार विभाग
• सी. राजगोपालाचारी- शिक्षा विभाग	• जोगेंद्र नाथ मंडल- विधि विभाग
• राजेंद्र प्रसाद- खाद्य एवं कृषि विभाग	• गजनफर अली खाँ- स्वास्थ्य विभाग
	• आई.आई. चुँदरीगर- वाणिज्य विभाग

अध्याय
3

संविधान की प्रस्तावना (Preamble of the Constitution)

प्रस्तावना या उद्देशिका किसी संविधान के दर्शन को सार रूप में प्रस्तुत करने वाली संक्षिप्त अभिव्यक्ति होती है। सर्वप्रथम अमेरिकी संविधान निर्माताओं ने अपने संविधान में प्रस्तावना को शामिल किया था। इसके बाद जैसे-जैसे विभिन्न देशों ने अपने संविधान का निर्माण किया, उनमें से कई देशों ने प्रस्तावना को महत्त्वपूर्ण समझकर अपने संविधान का हिस्सा बनाया। भारतीय संविधान सभा ने 22 जनवरी, 1947 को पं. नेहरू के उद्देश्य प्रस्ताव को स्वीकार किया। इसी उद्देश्य प्रस्ताव का विकसित रूप हमारे संविधान की प्रस्तावना (उद्देशिका) है। उद्देश्य प्रस्ताव और प्रस्तावना मिलकर संविधान के दर्शन को मूर्त रूप प्रदान करते हैं।

केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि प्रस्तावना संविधान का अंग है क्योंकि जब अन्य सभी उपबंध अधिनियमित किये जा चुके थे, उसके पश्चात् प्रस्तावना को अलग से पारित किया गया। संविधान के अन्य भागों की तरह प्रस्तावना में भी संशोधन संभव है, बशर्ते वह आधारभूत ढाँचे को क्षति न पहुँचाता हो।

3.1 प्रस्तावना की विषयवस्तु *(Content of the Preamble)*

1976 में 42वें संविधान संशोधन के माध्यम से प्रस्तावना में तीन शब्द– **समाजवादी (Socialist)**, **पंथनिरपेक्ष (Secular)** तथा **अखंडता (Integrity)** जोड़े गए थे। इन शब्दों के जुड़ने के बाद प्रस्तावना का वर्तमान रूप इस प्रकार है–

प्रस्तावना (उद्देशिका)

हम, भारत के लोग, भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिये तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक **न्याय**,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की **स्वतंत्रता**,

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता** प्राप्त कराने के लिये,

तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली **बंधुता** बढ़ाने के लिये

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 (मिती मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत् दो हज़ार छह विक्रमी) को **एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

3.2 प्रस्तावना की उपयोगिता *(Utility of the Preamble)*

भारतीय संविधान की प्रस्तावना को **संविधान की आत्मा** कहा गया है। संविधान की प्रस्तावना संविधान की व्याख्या का आधार प्रस्तुत करती है। यह संविधान का दर्पण है, जिसमें पूरे संविधान की तस्वीर दिखाई पड़ती है। इसकी उपयोगिता यह है कि यह संविधान के स्रोत, राजव्यवस्था की प्रकृति एवं संविधान के उद्देश्यों से परिचय कराती है। इसके साथ ही संविधान के अर्थ निर्धारण में एवं ऐतिहासिक स्रोत के रूप में भी प्रस्तावना उपयोगी है।

प्रस्तावना की उपयोगिता

- संविधान की शक्ति का स्रोत
- राज्यव्यवस्था की प्रकृति का परिचय
- संविधान के उद्देश्यों का परिचय
- संविधान के अर्थ निर्धारण के लिये उपयोगी
- ऐतिहासिक स्रोत के रूप में

अध्याय
4

संघ और उसका राज्यक्षेत्र (Union and it's Territory)

भारतीय संविधान के भाग-1 (अनुच्छेद 1 से 4) में इस प्रावधान का उल्लेख किया गया है कि भारत राज्यक्षेत्र (Indian Territory) में किस-किस प्रकार की इकाइयाँ होंगी तथा उनका भारत संघ (Union of India) के साथ क्या संबंध होगा। इस भाग को सही रूप में समझने के लिये हम सभी अनुच्छेदों पर क्रमश: विचार करेंगे–

अनुच्छेद 1 *(Article 1)*

- संविधान के अनुच्छेद **1(1)** में कहा गया है कि भारत अर्थात् इंडिया राज्यों का संघ होगा (India, that is Bharat shall be a union of States)। इस अनुच्छेद से स्पष्ट है कि हमारे देश का औपचारिक नाम इंडिया है। इस अनुच्छेद में उल्लिखित यूनियन **(Union)** शब्द का प्रयोग करने के कारण को स्पष्ट करते हुए डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कहा था–
  - भारत विभिन्न राज्यों के मध्य किसी समझौते का परिणाम नहीं है।
  - किसी भी राज्य को भारत संघ से पृथक् होने का अधिकार नहीं है।
- **अनुच्छेद 1(2)** में उल्लेख है कि राज्य और राज्यक्षेत्र वे होंगे जो संविधान की **पहली अनुसूची** में विनिर्दिष्ट हैं।
- **अनुच्छेद 1(3)** के अनुसार भारत के राज्यक्षेत्र में–
  - राज्यों के राज्यक्षेत्र
  - पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट संघ राज्यक्षेत्र और
  - ऐसे अन्य राज्यक्षेत्र जो अर्जित किये जाएँ, समाविष्ट होंगे।

प्रत्येक प्रभुत्व-संपन्न 'राष्ट्र' को नए राज्यक्षेत्रों के अर्जन का अधिकार होता है। ऐसे अर्जन हेतु विधि बनाने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि अर्जन अंतर्राष्ट्रीय विधि द्वारा अनुमोदित रीति से होता है, जैसे– युद्ध में जीतकर, संधि के अनुसरण में, अध्यर्पण द्वारा या स्वामीविहीन भूमि पर कब्ज़ा करके। अर्जन के पश्चात् वह राज्यक्षेत्र भारत का अंग हो जाता है और केंद्रशासित प्रदेश (संघ राज्यक्षेत्र) की तरह शासित होता है।

अनुच्छेद 2 *(Article 2)*

- **अनुच्छेद** 2 में उल्लेख है कि "संसद विधि द्वारा, ऐसे निर्बंधनों (Restrictions) और शर्तों (conditions) पर जो वह ठीक समझे, संघ में नए राज्य का प्रवेश या स्थापना कर सकेगी"। इसका एक अर्थ है कि संसद उस राज्य को, जो पहले से संस्थापित है परंतु भारत का अंग नहीं है, भारत में शामिल कर सकेगी।

अनुच्छेद 3 *(Article 3)*

नए राज्य के निर्माण, राज्यों के नाम, सीमा, क्षेत्र बदलने की प्रक्रिया का वर्णन अनुच्छेद 3 में किया गया है कि **संसद विधि द्वारा–**

- किसी राज्य में से उसका राज्यक्षेत्र अलग करके अथवा दो या अधिक राज्यों को या राज्यों के भागों को मिलाकर नए राज्य का निर्माण कर सकेगी;
- किसी राज्य का क्षेत्र बढ़ा सकेगी;
- किसी राज्य का क्षेत्र घटा सकेगी;
- किसी राज्य की सीमाओं में परिवर्तन कर सकेगी;
- किसी राज्य के नाम में परिवर्तन कर सकेगी।

अध्याय
5

नागरिकता संबंधी उपबंध (Provisions Related to Citizenship)

भारतीय संविधान के भाग 2 में अनुच्छेद 5 से 11 में भारत की नागरिकता संबंधी प्रावधान दिये गए हैं। ये प्रावधान स्पष्ट करते हैं कि इस राज्यक्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों में से भारत के नागरिक (Citizens) कौन होंगे। संविधान में नागरिकता से संबंधित बहुत कम प्रावधान दिये गए हैं। इसमें केवल यह बताया गया है कि संविधान लागू होने के दिन किन व्यक्तियों को भारत का नागरिक माना जाएगा। जबकि बाद की स्थितियों के लिये नागरिकता संबंधी कानून बनाने की पूर्ण शक्ति संसद को दी गई है। इस शक्ति के आधार पर संसद ने सर्वप्रथम 1955 में 'नागरिकता अधिनियम' पारित किया था।

व्यक्तियों के विभिन्न वर्ग *(Different categories of persons)*

'जनसंख्या' राज्य के चार अनिवार्य घटकों में से एक है। राज्य की जनसंख्या में चार प्रकार के व्यक्ति हो सकते हैं-

(i) **नागरिक–** ये राज्य के पूर्ण सदस्य होते हैं और उसके प्रति निष्ठा रखते हैं। कोई भी राज्य अपने नागरिकों को सभी सिविल व राजनीतिक अधिकार देता है। आधुनिक समय में इनकी पहचान यह है कि वे किस देश का पासपोर्ट रखते हैं अथवा रखने की योग्यता रखते हैं।

(ii) **विदेशी–** ये वे व्यक्ति हैं जो किसी अन्य देश के नागरिक होते हैं। विदेशी मित्र भी हो सकते हैं और शत्रु भी। इनको वे सभी अधिकार प्राप्त नहीं होते जो भारतीय नागरिकों को प्राप्त हैं। ऐसे व्यक्तियों को अनुच्छेद 21 के तहत **जीवन का अधिकार** प्राप्त है परंतु अनुच्छेद 19 के तहत प्रदत्त **स्वतंत्रता का अधिकार** प्राप्त नहीं है। साथ ही विदेशी शत्रु को अनुच्छेद 22(3) का लाभ उठाने का भी अधिकार नहीं है परंतु विदेशी मित्र इस अधिकार का लाभ उठा सकते हैं।

(iii) **राज्यविहीन व्यक्ति–** ये किसी देश के नागरिक नहीं होते। कुछ देश ऐसे भी हो सकते हैं जिनमें इस प्रकार का कोई व्यक्ति न हो। उन्हें वही अधिकार प्राप्त होते हैं जो विदेशियों को होते हैं। भारत में असम में रहने वाले बहुत से अवैध प्रवासियों के बच्चे इसी श्रेणी में आते हैं। वे न तो वंश के आधार पर बांग्लादेश के नागरिक बन पाए और न ही देशीयकरण के आधार पर भारत के।

(iv) **शरणार्थी–** शरणार्थी वे व्यक्ति होते हैं जो अपने देश में नस्ल, धर्म, भाषा, राष्ट्रीयता, राजनीतिक विचारधारा या सामाजिक पहचान के आधार पर उत्पीड़न सहने या उत्पीड़न के भय से किसी अन्य देश में शरण ले लेते हैं, जैसे- भारत में दलाई लामा और उनके तिब्बती समर्थक।

नागरिकों के विशेष अधिकार *(Special rights of citizens)*

प्राय: सभी देश अपने नागरिकों को शेष व्यक्तियों की तुलना में कुछ विशेषाधिकार देते हैं। भारतीय संविधान में भी कई ऐसे अधिकारों का उल्लेख है जो केवल भारतीय नागरिकों को ही प्राप्त हैं, अन्य किसी को नहीं। ये निम्नलिखित हैं–

- **अनुच्छेद 15** द्वारा प्रदत्त भेदभाव के प्रतिषेध का अधिकार।
- **अनुच्छेद 16** द्वारा प्रदत्त लोक नियोजन में अवसर की समता का अधिकार।
- **अनुच्छेद 19** द्वारा प्रदत्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता व अन्य अधिकार।
- **अनुच्छेद 29** के अधीन अल्पसंख्यक वर्गों की भाषा, लिपि व संस्कृति के संरक्षण का अधिकार।
- कई पद ऐसे हैं जिन पर केवल भारत के नागरिक ही नियुक्त हो सकते हैं, जैसे- राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, राज्यपाल, महान्यायवादी, महाधिवक्ता, संसद सदस्य, राज्य विधानमंडल सदस्य आदि।
- मतदान का अधिकार।
- संसद की सदस्यता तथा राज्य विधानमंडलों की सदस्यता की अर्हता।

अध्याय
6

मूल अधिकार
(Fundamental Rights)

मूल अधिकारों (मौलिक अधिकार) का अर्थ ऐसे अधिकारों से है जिनके द्वारा व्यक्ति अपना पूर्ण मानसिक, भौतिक और नैतिक विकास कर सके। मूल अधिकार संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान से लिये गए हैं। यह सापेक्षिक अधिकार हैं जो समय, स्थान, परिस्थिति विशेष में परिवर्तनशील होते हैं। मूल अधिकार देश की मूल विधि अर्थात् संविधान में उल्लिखित हैं। ये **संविधान द्वारा रक्षित और प्रवृत्त** होते हैं। मूल अधिकार सामान्यत: व्यक्ति के अधिकारों को बढ़ाते हैं तथा राज्य के अधिकारों को सीमित करते हैं। **मूल अधिकार सकारात्मक** और **नकारात्मक** दोनों प्रकृति के हो सकते हैं।

6.1 पृष्ठभूमि *(Background)*

भारत में मूल अधिकारों की आवश्यकता क्यों? *(Why the need of fundamental rights in India)*

- भारत की अधिकांश जनता निरक्षर होने के कारण अपने राजनीतिक हितों और अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं है। अत: यह संभावना बनी रहती है कि कहीं राज्य द्वारा उनके मूल अधिकारों का हनन न कर लिया जाए।
- संसदीय प्रणाली में जहाँ कार्यपालिका का विधायिका में बहुमत होता है, हमेशा यह आशंका रहती है कि सरकार संसदीय बहुमत का प्रयोग करते हुए मूल अधिकारों को छीनने वाला कानून न बना दे।
- भारत में धार्मिक और नस्लीय वैविध्य काफी ज़्यादा है, जहाँ अल्पसंख्यक वर्ग अपनी कम जनसंख्या के कारण प्राय: कमज़ोर सिद्ध होते हैं; उन्हीं कमज़ोर वर्गों के हितों की रक्षा और अधिकारों की सुरक्षा के लिये मूल अधिकारों की आवश्यकता महसूस हुई।
- भारत में संघात्मक पद्धति को स्वीकार किया गया है, ऐसे में यह संभावना स्वाभाविक है कि किसी प्रांत की सरकार नागरिकों के अधिकार छीनने का प्रयास करे। इसका एक ही समाधान था कि संविधान में ही व्यक्तियों के **मूल अधिकारों की गारंटी** दे दी जाए ताकि सरकारें संविधान से बँधी रहें।
- मूल अधिकारों की घोषणा की आवश्यकता इसलिये भी थी ताकि जनता को यह बोध हो कि संविधान की नज़र में कोई विशेष नहीं है बल्कि सबके हक और अधिकार समान हैं।
- यह अधिकार विशेष रूप से दलित, आदिवासी, शोषित तथा स्त्रियों सहित कई ऐसे वर्गों के लिये आवश्यक थे जो सदियों से शोषण और दमन का शिकार रहे हैं। ऐसे लोगों को मुख्य धारा में लाने के लिये मूल अधिकारों की व्यवस्था करना ज़रूरी था।

अनुच्छेद 12 : परिभाषा *(Definition)*

इस अनुच्छेद के तहत **राज्य** की परिभाषा दी गई है, जिसमें राज्य के अंतर्गत–

- भारत की सरकार और संसद;
- प्रत्येक राज्य की सरकार और विधानमंडल;
- सभी स्थानीय प्राधिकारी और
- भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन सभी स्थानीय और अन्य प्राधिकारी शामिल हैं।

अनुच्छेद 13 : मूल अधिकारों से असंगत या उनका अल्पीकरण करने वाली विधियाँ

(Laws inconsistent with or in derogation of the fundamental rights)

अनुच्छेद 13 (1) में कहा गया है कि इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियाँ उस मात्रा तक शून्य होंगी जिस मात्रा तक वे इस भाग-3 के उपबंधों से असंगत हैं अर्थात् मूल अधिकारों से असंगत हैं।

अध्याय
7

राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत (Directive Principles of State policy)

संविधान के **भाग 4** को **राज्य के नीति निदेशक तत्त्व** (डी.पी.एस.पी.) शीर्षक दिया गया है। इसके अंतर्गत **36 से 51** तक के **अनुच्छेद** शामिल हैं। संविधान का यह भाग **आयरलैंड के संविधान** से प्रभावित है। इसके माध्यम से संविधान राज्य को बताता है कि उसे सामाजिक तथा आर्थिक न्याय सुनिश्चित करने के लिये नैतिक दृष्टि से किन पक्षों पर बल देना चाहिये।

नीति-निदेशक तत्त्वों का इतिहास *(History of directive principles)*

भारतीय संविधान में नीति-निदेशक तत्त्वों का विकास मूल अधिकारों के विकास के साथ ही हो गया था। संविधान सभा के सदस्यों में इस बात पर सहमति बन गई थी कि स्वतंत्र भारत में प्रत्येक व्यक्ति को मूल अधिकार तो दिये ही जाने चाहिये, साथ ही राज्य द्वारा ऐसे आदर्शों को साधने की कोशिश भी की जानी चाहिये जो सामाजिक न्याय के लिये वांछनीय हैं। इन सिद्धांतों को मूल अधिकारों के रूप में दिया जाना तत्कालीन परिस्थितियों में संभव नहीं था। ऐसे अधिकार, जिन्हें तत्काल देना संभव नहीं था, **बी.एन. राव** की सलाह पर नीति-निदेशक तत्त्वों की श्रेणी में रख दिये गए ताकि जब सरकारें सक्षम हो जाएँ तब धीरे-धीरे इन उपबंधों को लागू करें। इन्हीं उपबंधों को संविधान के **भाग 4** में रखा गया तथा **राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत** नाम दिया गया।

राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों की विशेषताएँ *(Features of directive principles of state policy)*

- राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों से स्पष्ट होता है कि नीतियों एवं कानूनों को प्रभावशाली बनाते समय राज्य इन तत्त्वों को ध्यान में रखेगा। ये संवैधानिक निर्देश कार्यपालिका और प्रशासनिक मामलों में राज्य के लिये सिफारिशें हैं। अनुच्छेद 36 के अनुसार भाग 4 में राज्य शब्द का वही अर्थ है जो मूल अधिकारों से संबंधित भाग 3 में है।

- डी.पी.एस.पी. पर गांधीवाद, समाजवाद तथा उदारवाद का प्रभाव है।
- इसके द्वारा आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना की जाती है।
- इसको लागू करने का दायित्व राज्य सरकार का है।
- इसे न्यायालय द्वारा लागू नहीं कराया जा सकता।

- यह भारत शासन अधिनियम, 1935 में उल्लेखित अनुदेशों के समान है। डॉ. बी.आर. अंबेडकर के शब्दों में निदेशक तत्त्व अनुदेशों के समान हैं जो भारत शासन अधिनियम, 1935 के अंतर्गत ब्रिटिश सरकार द्वारा गवर्नर जनरल और भारत की औपनिवेशिक कॉलोनियों के गवर्नरों को जारी किये जाते थे। जिसे निदेशक तत्त्व कहा जाता है, वह इन अनुदेशों का ही दूसरा नाम है।
- निदेशक तत्त्वों की प्रकृति न्यायोचित नहीं है। इनका हनन होने पर न्यायालय द्वारा इन्हें लागू नहीं कराया जा सकता। अत: सरकार (केंद्र, राज्य एवं स्थानीय) इन्हें लागू करने के लिये बाध्य नहीं है।
- राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों का उद्देश्य **लोक-कल्याणकारी राज्य** की स्थापना करना है।
- ये संविधान की प्रस्तावना में उद्धृत सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय तथा स्वतंत्रता, समानता और बंधुता की भावना पर आधारित हैं।
- ये वे विचार हैं जिन्हें संविधान निर्माताओं ने भविष्य में बनने वाली सरकारों के समक्ष एक **पथ-प्रदर्शक** के रूप में रखा है।
- जनता के हित और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना के लिये नीति-निदेशक तत्त्वों को यथाशक्ति कार्यान्वित करना राज्य का कर्त्तव्य है।

अध्याय
8

मूल कर्त्तव्य (Fundamental Duties)

भारत के संविधान में मूल अधिकारों के साथ मूल कर्त्तव्यों (मौलिक कर्त्तव्यों) को भी शामिल किया गया है। वस्तुतः अधिकार और कर्त्तव्य एक-दूसरे के पूरक हैं। अधिकारविहीन कर्त्तव्य निरर्थक होते हैं जबकि कर्त्तव्यविहीन अधिकार निरंकुशता पैदा करते हैं।

यदि व्यक्ति को 'गरिमापूर्ण जीवन' का अधिकार प्राप्त है तो उसका कर्त्तव्य बनता है कि वह अन्य व्यक्तियों के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार का भी ख्याल रखे। यदि व्यक्ति को 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' प्यारी है तो यह भी ज़रूरी है कि उसमें दूसरों की 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के प्रति धैर्य और सहिष्णुता विद्यमान हो।

रोचक बात यह है कि विश्व के अधिकांश लोकतांत्रिक देशों के संविधान में नागरिकों के कर्त्तव्यों का उल्लेख नहीं किया गया है, उनमें केवल मूल अधिकारों की घोषणा की गई है, जैसे– अमेरिकी संविधान। कुछ साम्यवादी देशों में मूल कर्त्तव्यों की घोषणा करने की परंपरा दिखाई पड़ती है। भूतपूर्व सोवियत संघ का उदाहरण इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। **भारतीय संविधान में उल्लिखित मूल कर्त्तव्य भूतपूर्व सोवियत संघ के संविधान से ही प्रभावित हैं।**

भारतीय संविधान में मूल कर्त्तव्यों का इतिहास *(History of fundamental duties in Indian constitution)*

भारतीय संविधान में भी प्रारंभ में मूल कर्त्तव्य शामिल नहीं थे। इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में 1975 ई. में आपातकाल की घोषणा की गई, तभी **सरदार स्वर्ण सिंह** के नेतृत्व में संविधान में उपयुक्त संशोधन सुझाने के लिये एक समिति का गठन किया गया था। इस समिति ने यह सुझाव दिया कि संविधान में मूल अधिकारों के साथ-साथ मूल कर्त्तव्यों का समावेश होना चाहिये। समिति का तर्क यह था कि भारत में अधिकांश लोग सिर्फ अधिकारों पर बल देते हैं, यह नहीं समझते कि हर अधिकार किसी-न-किसी कर्त्तव्य के सापेक्ष होता है।

स्वर्ण सिंह समिति की अनुशंसाओं के आधार पर **42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976** के द्वारा संविधान के भाग 4 के पश्चात् **भाग 4क** अंतःस्थापित किया गया और उसके भीतर **अनुच्छेद 51क** को रखते हुए 10 मूल कर्त्तव्यों की सूची प्रस्तुत की गई। आगे चलकर **86वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2002** के माध्यम से एक और मूल कर्त्तव्य जोड़ा गया जिसके तहत 6–14 वर्ष की आयु के बच्चों के माता-पिता या संरक्षक पर यह कर्त्तव्य आरोपित किया गया है कि वे अपने बच्चे अथवा प्रतिपाल्य को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करेंगे।

मूल कर्त्तव्यों की सूची *(List of fundamental duties)*

वर्तमान में संविधान के भाग 4क तथा अनुच्छेद 51क के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक के कुल 11 मूल कर्त्तव्य हैं। इसके अनुसार, भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह–

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे।

(ख) स्वतंत्रता के लिये हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में सँजोए रखे और उनका पालन करे।

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे।

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किये जाने पर राष्ट्र की सेवा करे।

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं।

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे।

अध्याय
9

केंद्र (संघ) की कार्यपालिका [Executive of Centre (Union)]

राजव्यवस्था का वह अंग जो नीति-निर्माण, नीति-क्रियान्वयन तथा विधियों के क्रियान्वयन का कार्य करे, उसे कार्यपालिका कहते हैं। कार्यपालिका अपनी नीतियों एवं कार्यों के लिये विधायिका के प्रति उत्तरदायी है। भारतीय संविधान के **भाग 5 के अनुच्छेद 52 से 78** तक में संघ की कार्यपालिका का उल्लेख किया गया है जिसमें सम्मिलित अंग, राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्रिपरिषद तथा महान्यायवादी आदि हैं। भारतीय संविधान केंद्र एवं राज्य दोनों में संसदीय सरकार की व्यवस्था करता है। जहाँ एक तरफ अनुच्छेद 74 और अनुच्छेद 75 के माध्यम से केंद्र में संसदीय स्वरूप की व्यवस्था होती है तो वहीं दूसरी तरफ अनुच्छेद 163 और अनुच्छेद 164 के माध्यम से राज्यों के लिये संसदीय व्यवस्था का प्रावधान किया जाता है।

केंद्र की कार्यपालिका

- भारत का राष्ट्रपति
- भारत का उपराष्ट्रपति
- भारत का प्रधानमंत्री
- केंद्रीय मंत्रिपरिषद
- भारत का महान्यायवादी

9.1 भारत का राष्ट्रपति *(The President of India)*

राष्ट्रपति भारत का राज्य प्रमुख होता है। वह भारत का प्रथम नागरिक है और राष्ट्र की एकता, अखंडता एवं सुदृढ़ता का प्रतीक है। संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होती है और वह इसका प्रयोग संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करता है। राष्ट्रपति देश की सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति होता है।

राष्ट्रपति का निर्वाचन *(Election of the President)*

संविधान के अनुच्छेद 54 तथा 55 में राष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित उपबंध दिये गए हैं। अनुच्छेद 54 में इस बात का निर्देश है कि राष्ट्रपति के निर्वाचन में मत देने का अधिकार किसे होगा, जबकि अनुच्छेद 55 में बताया गया है कि निर्वाचन की प्रक्रिया क्या होगी।

निर्वाचक मंडल *(Electoral college)*

अनुच्छेद 54 में स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन एक निर्वाचक मंडल के माध्यम से होगा जिसमें–

(क) संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य तथा

(ख) राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य शामिल होंगे।

इस निर्वाचक मंडल में संविधान के '70वें संशोधन अधिनियम, 1992' के द्वारा एक स्पष्टीकरण अंत:स्थापित किया गया था। इसके अनुसार राष्ट्रपति के निर्वाचन के संबंध में राज्यों की सूची में **दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र** और **पुदुच्चेरी संघ राज्यक्षेत्र** भी शामिल होंगे।

अप्रत्यक्ष निर्वाचन *(Indirect election)*

निर्वाचक मंडल के प्रावधान से स्पष्ट हो जाता है कि भारत में राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष तरीके से होता है, जनता स्वयं चुनाव द्वारा राष्ट्रपति को नहीं चुनती। संविधान सभा में इस प्रश्न पर काफी बहस भी हुई थी। अंत में अप्रत्यक्ष निर्वाचन को निम्नलिखित ठोस आधारों पर स्वीकार कर लिया गया–

(क) भारत की बड़ी जनसंख्या तथा वृहत् आकार को देखते हुए प्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था करना न सिर्फ महँगा होता बल्कि समय की दृष्टि से भी अनुपयोगी होता।

(ख) यदि प्रत्यक्ष निर्वाचन कर भी लिया जाता तो समस्याएँ कम नहीं होतीं। शक्ति संघर्ष की संभावना बनी रहती क्योंकि पूरे देश की जनता द्वारा चुना गया राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद की अधीनता कभी स्वीकार न करता।

अध्याय
10

राज्य की कार्यपालिका (State Executive)

भारत विविधताओं से परिपूर्ण देश है। यहाँ राज्यों में भाषा, रीति-रिवाज़ एवं संस्कृति संबंधी विविधताएँ पाई जाती हैं। इन विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान में संघ एवं राज्यों से संबंधित संवैधानिक व्यवस्थाओं में एकरूपता रखने का प्रयास किया गया है। जिस प्रकार संघीय कार्यपालिका राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, मंत्रिपरिषद (जिसका प्रमुख प्रधानमंत्री होता है) तथा महान्यायवादी से मिलकर बनती है, उसी प्रकार राज्यों में कार्यपालिका राज्यपाल, राज्य मंत्रिपरिषद (जिसका प्रधान मुख्यमंत्री होता है) तथा महाधिवक्ता से मिलकर बनती है। राज्य कार्यपालिका के संबंध में उपबंध संविधान के **भाग-6 के अनुच्छेद 153 से 167** में दिये गए हैं।

राज्य की कार्यपालिका
- राज्यपाल
- मुख्यमंत्री
- मंत्रिपरिषद
- महाधिवक्ता

10.1 राज्यपाल *(The Governor)*

राज्य की संवैधानिक व्यवस्था में राज्यपाल का पद अत्यंत महत्त्व रखता है। संविधान के अनुच्छेद 153 के अनुसार प्रत्येक राज्य के लिये एक राज्यपाल होगा, परंतु 7वें संविधान संशोधन द्वारा यह प्रावधान जोड़ा गया कि एक ही व्यक्ति को दो या उससे अधिक राज्यों का राज्यपाल नियुक्त किया जा सकता है। राज्यपाल राज्य की कार्यपालिका का संवैधानिक प्रमुख होने के साथ ही केंद्र का प्रतिनिधि भी होता है तथा राज्य विधानमंडल का अभिन्न अंग होता है।

राज्यपाल की नियुक्ति *(Appointment of the Governor)*

संविधान निर्माताओं के समक्ष मुख्य प्रश्न यह था कि राज्यपाल का चयन किस प्रकार किया जाए! अमेरिका जैसे संघात्मक देशों में राज्यपाल का चयन प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा तथा कनाडा जैसे देशों में राज्यपाल की नियुक्ति केंद्र द्वारा की जाती है लेकिन भारतीय परिस्थितियों में कौन-सी व्यवस्था उपयुक्त होगी, इस पर विचार-विमर्श के उपरांत राज्यपाल की नियुक्ति प्रक्रिया को अपनाया गया। इस निर्णय के **निम्नलिखित आधार** माने जाते हैं-

- राज्यपाल का निर्वाचन राज्यों में स्थापित की जाने वाली संसदीय व्यवस्था के अनुरूप नहीं हो सकता है क्योंकि राज्यपाल का निर्वाचन होने से मुख्यमंत्री से संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो सकती है क्योंकि वह भी जनता का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि होता है।
- निर्वाचित राज्यपाल का संबंध अपने दल से बना रहता है जिससे वह निष्पक्ष व नि:स्वार्थ संवैधानिक मुखिया की भूमिका का निर्वहन नहीं कर पाता।
- राज्यपाल राज्य में केंद्र का प्रतिनिधि होता है, इसलिये राज्यपाल का प्रत्यक्ष निर्वाचन केंद्र-राज्य संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता।
- चूँकि राज्यपाल केवल **संवैधानिक मुखिया** है, अत: उसका प्रत्यक्ष चुनाव अनावश्यक धन व संसाधनों की बर्बादी का कारण होता।
- अंतत: यह निर्णय लिया गया कि राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा की जाएगी तथा वह राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण कर सकता है।

राज्यपाल के लिये अर्हताएँ *(Qualifications for Governor)*

संविधान में राज्यपाल के पद पर नियुक्ति के लिये दो अर्हताएँ निर्धारित की गई हैं-

1. उसे भारत का नागरिक होना चाहिये।

अध्याय 11

केंद्र (संघ) की विधायिका [Legislature of Centre (Union)]

भारतीय संविधान में संसदीय लोकतांत्रिक प्रणाली को अपनाया गया है, जिसे सरकार का **वेस्टमिंस्टर मॉडल** भी कहा जाता है। संसदीय लोकतंत्र में संसद के सामान्यत: तीन लक्षण होते हैं, प्रथम- यह जनता का प्रतिनिधित्व करती है, द्वितीय- इसमें उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार होती है तथा तृतीय- मंत्रिपरिषद लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

संसद
- राष्ट्रपति
- राज्यसभा
  - उच्च सदन
  - अधिकतम सदस्य-250
- लोकसभा
  - निम्न सदन
  - अधिकतम सदस्य-552

भारतीय संसद राष्ट्रपति, लोकसभा एवं राज्यसभा से मिलकर बनती है। राष्ट्रपति इसका अभिन्न अंग होता है, क्योंकि कोई भी विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात् ही विधि बन पाता है। संसद की संरचना, अवधि, अधिकारों, प्रक्रियाओं, विशेषाधिकारों तथा शक्तियों का वर्णन संविधान के भाग-5 के अंतर्गत अनुच्छेद 79 से 122 में किया गया है।

11.1 संसद का गठन *(Constitution of Parliament)*

भारत की संसद के तीन प्रमुख अंग- राष्ट्रपति, राज्यसभा एवं लोकसभा हैं। राज्यसभा को उच्च सदन या दूसरा चैंबर या बड़ों की सभा कहते हैं तथा लोकसभा को निम्न सदन या पहला चैंबर या चर्चित सभा कहा जाता है।

राज्यसभा का गठन *(Composition of the council of states)*

हमारी संसद का एक सदन 'राज्यसभा' है जिसे अंग्रेज़ी में 'Council of States' कहा जाता है। इसकी संरचना प्राय: वैसी ही है जैसी इंग्लैंड में 'हाउस ऑफ लॉर्ड्स' की है। थोड़ी बहुत मात्रा में इसे अमेरिकी कॉन्ग्रेस के द्वितीय सदन 'सीनेट' के समकक्ष भी माना जा सकता है। कभी-कभी इंग्लैंड की राजव्यवस्था के अनुकरण पर इसे उच्च सदन (Upper House) कह दिया जाता है, हालाँकि संविधान में ऐसी अभिव्यक्ति का प्रयोग नहीं किया गया है।

राज्यसभा की संरचना	संवैधानिक उपबंध	वर्तमान स्थिति
1. राज्यों एवं संघ राज्यक्षेत्रों के प्रतिनिधि	238	233 (229 सदस्य राज्यों से तथा 4 सदस्य संघ राज्यक्षेत्रों से)
2. राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत सदस्य	12	12
अधिकतम सदस्य	**250**	**245**

- राज्यसभा में राज्यों एवं संघ राज्यक्षेत्रों की सीटों का बँटवारा जनसंख्या के आधार पर किया गया है। किसी राज्य की जनसंख्या के पहले 50 लाख व्यक्तियों में हर 10 लाख व्यक्तियों पर एक तथा उसके बाद प्रति 20 लाख व्यक्तियों पर एक राज्यसभा सदस्य होगा जिस कारण अलग-अलग राज्यों से आने वाले प्रतिनिधियों की संख्या में राज्यसभा में अंतर पाया जाता है जबकि अमेरिकी सीनेट में राज्यों का प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर न होकर बराबरी के आधार पर होता है अर्थात् सभी राज्यों को सीनेट में समान प्रतिनिधित्व दिया गया है। चौथी अनुसूची में विभिन्न राज्य एवं संघ राज्यक्षेत्रों को राज्यसभा में आवंटित स्थानों की सूची दी गई है, जो निम्नलिखित है-

आंध्र प्रदेश	11	केरल	9	पंजाब	7	हिमाचल प्रदेश	3	तेलंगाना	7
असम	7	मध्य प्रदेश	11	राजस्थान	10	मणिपुर	1	दिल्ली	3

अध्याय
12

राज्य विधायिका (The State Legislature)

जिस प्रकार केंद्रीय विधायिका भारत के संपूर्ण क्षेत्र के लिये कानूनों का निर्माण करती है, उसी प्रकार राज्य विधायिका राज्य के विषयों से संबंधित विधियों को निर्मित करती है। राज्य विधायिका के गठन में एकरूपता नहीं है, जहाँ किसी राज्य में एक सदन अर्थात् राज्य विधानसभा ही है वहीं कुछ राज्यों में द्वि-सदनीय विधायिका अर्थात् विधानसभा एवं विधानपरिषद दोनों हैं।

राज्य विधायिका के संगठन, कार्यकाल, अधिकारियों की प्रक्रियाओं तथा शक्तियों आदि के बारे में संविधान के भाग 6 के अनुच्छेद 168 से 212 में उल्लेख किया गया है। अनुच्छेद 168 में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य के लिये एक विधानमंडल होगा, जो राज्यपाल और एक या दो सदनों से मिलकर बनेगा। जहाँ किसी राज्य में विधानमंडल के दो सदन हैं वहाँ एक का नाम विधानपरिषद और दूसरे का नाम विधानसभा होगा और जहाँ केवल एक सदन है वहाँ उसका नाम विधानसभा होगा।

12.1 विधानपरिषद *(The Legislative Council)*

विधानपरिषद का उत्सादन या सृजन तथा इसकी संरचना के बारे में प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 169 और 171 में दिये गए हैं। इनसे संबंधित प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं–

सृजन तथा उत्सादन *(Creation and abolition)*

- **अनुच्छेद 169** के अनुसार, संसद विधि द्वारा किसी विधानपरिषद वाले राज्य में विधानपरिषद के उत्सादन के लिये या ऐसे राज्य में जिसमें विधानपरिषद नहीं है, विधानपरिषद के सृजन के लिये उपबंध कर सकेगी, यदि उस राज्य की विधानसभा ने इस आशय का संकल्प विधानसभा की कुल सदस्य संख्या के बहुमत तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की संख्या के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर दिया है। लेकिन अनुच्छेद 169(3) में यह स्पष्टीकरण है कि विधानपरिषद के उत्सादन या सृजन की विधि अनुच्छेद 368 के तहत संविधान संशोधन नहीं मानी जाएगी।
- मूल संविधान में कुल आठ राज्यों में विधानपरिषद की व्यवस्था की गई थी, अन्य राज्यों में एकसदनीय व्यवस्था थी। द्वि-सदन वाले ऐसे राज्य– आंध्र प्रदेश, बिहार, बंबई (अब महाराष्ट्र), तमिलनाडु, मैसूर (अब कर्नाटक), पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल थे।
- वर्तमान में **सात राज्यों** कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार, जम्मू-कश्मीर, आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाना में विधानपरिषद है तथा अन्य 22 राज्यों में केवल विधानसभा का ही प्रावधान है– विधानपरिषद में सदस्यों की संख्या निम्नलिखित है–

राज्य	विधानपरिषद की सदस्य संख्या	राज्य	विधानपरिषद की सदस्य संख्या
उत्तर प्रदेश	100	बिहार	75
जम्मू-कश्मीर	36	कर्नाटक	75
तेलंगाना	40	आंध्र प्रदेश	58
महाराष्ट्र	78		

विधानपरिषद की संरचना *(Composition of legislative council)*

- विधानपरिषद के सदस्यों का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। अनुच्छेद 171 के अनुसार विधानपरिषद के कुल सदस्यों की संख्या उस राज्य की विधानसभा के सदस्यों की कुल संख्या के एक-तिहाई से अधिक नहीं होनी चाहिये, लेकिन विधानपरिषद के कुल सदस्यों की संख्या किसी भी दशा में 40 से कम नहीं होनी चाहिये। इस प्रकार विधानपरिषद की कुल सदस्य संख्या उस राज्य की विधानसभा की संख्या पर निर्भर करती है।

अध्याय
13

न्यायपालिका (Judiciary)

भारतीय संविधान में अमेरिकी संविधान के विपरीत एकीकृत न्याय व्यवस्था का प्रावधान किया गया है, जिसके शीर्ष स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय एवं उसके उपरांत राज्य उच्च न्यायालय एवं अधीनस्थ न्यायालयों की व्यवस्था की गई है। अधीनस्थ न्यायालयों में ज़िला न्यायालय एवं इससे नीचे स्तर के न्यायालय शामिल हैं। न्यायालय की एकल व्यवस्था भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत ग्रहण की गई है।

भारत अमेरिका की तरह संघीय देश है परंतु न्यायिक व्यवस्था में भिन्नता है। अमेरिका में न्यायालय की द्वैध व्यवस्था है, जिसमें केंद्र हेतु संघीय कानून है जो संघ-न्याय क्षेत्रों में लागू होता है तथा राज्य हेतु राज्य कानून है जो राज्य न्याय क्षेत्रों में लागू होते हैं। जबकि भारत में एकल न्याय व्यवस्था का प्रावधान है, जिसमें केंद्र एवं राज्यों या राज्यों के बीच मामले आदि की अंतिम सुनवाई करने का अधिकार केवल सर्वोच्च न्यायालय को है।

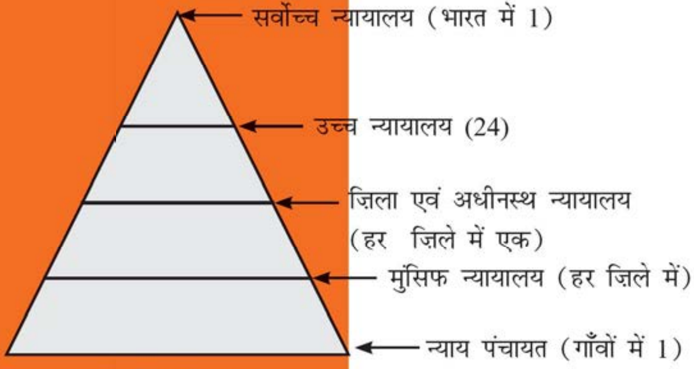

भारत की न्यायिक संरचना

भारत का सर्वोच्च न्यायालय
● यह उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का अन्य न्यायालयों में स्थानांतरण कर सकता है।
● इसके फैसले सभी अदालतों को मानने होते हैं।
● यह किसी अदालत का मुकदमा अपने पास मंगवा सकता है।
● यह किसी एक उच्च न्यायालय में चल रहे मुकदमे को दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है।

⇓

उच्च न्यायालय
● निचली अदालतों के फैसले पर की गई अपील की सुनवाई कर सकता है।
● मौलिक अधिकारों को बहाल करने के लिये **रिट जारी** कर सकता है।
● राज्यों के क्षेत्राधिकार में आने वाले मुकदमों का निपटारा कर सकता है।
● अधीनस्थ अदालतों के पर्यवेक्षण और नियंत्रण की शक्तियाँ निहित हैं।

⇓

ज़िला न्यायालय
● ज़िले में दायर मुकदमों की सुनवाई करता है।
● निचली अदालतों के फैसले पर की गई अपील की सुनवाई करता है।
● आपराधिक मामलों पर फैसला देता है।

⇓

अधीनस्थ न्यायालय
● फौजदारी (आपराधिक) मुकदमों पर विचार करता है।
● दीवानी (सिविल) मुकदमों पर विचार करता है।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- क्विक रिवीजन हेतु प्रत्येक अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकलन।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456